International Journal of Advance and Applied Research
www.ijaar.co.in
ISSN – 2347-7075 Impact Factor – 8.141
Peer Reviewed Bi-Monthly
Vol. 7 No. 2 January – February - 2026

21 वी सदी के हिंदी काव्य साहित्य में स्त्री विमर्श

अनिल भाऊसाहेब झिने[1], डॉ. भरत त्र्यंबक शेणकर[2]

[1]शोधछात्र, संगमनेर नगरपालिका कला, डी.जे. मालपाणी कॉमर्स आणि बी.एन. सारडा सायन्स कॉलेज, तहसील – संगमनेर, जिला - अहिल्यानगर, महाराष्ट्र.

[2] शोध निर्देशक, सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे

Corresponding Author – अनिल भाऊसाहेब झिने

DOI - 10.5281/zenodo.18654502

सारांश :

21वीं सदी का काव्य साहित्य समाज की वर्तमान वास्तविकताओं और विशेष रूप से स्त्री जीवन की जटिल सच्चाइयों को संवेदनशीलता और ईमानदारी से प्रस्तुत करता है। इस सदी का काव्य साहित्य "स्त्री विमर्श" को केंद्र में रखकर केवल सौंदर्य या कल्पना तक सीमित नहीं है, बल्कि पारिवारिक टूटन और स्त्री के शोषण, बाल विवाह, दहेज, घरेलू हिंसा और मानसिक उत्पीड़न को उजागर करती है। इस सदी के रचनाकारों ने स्त्री-विमर्श को सशक्त दिशा दी है। समग्रत: 21 वीं सदी की कविता "स्त्री विमर्श" की आवाज को बुलंद कर स्त्री की पीड़ा, उसके भीतर पल रहे प्रतिरोध, आत्मबोध और चेतना को भी स्वर देती है।

कुंजीशब्द: स्त्री विमर्श, नारी सशक्तिकरण, स्त्री अस्मिता, पुरुषप्रधान समाज, पारिवारिक संबंध, सामाजिक विसंगतियाँ, आत्मसम्मान, आत्मबोध, स्त्री चेतना।

प्रस्तावना:

'स्त्री विमर्श' या 'नारी विमर्श' 21 वीं सदी में सबसे ज्यादा चर्चित विषय रहा है। 'विमर्श' शब्द का अर्थ है - किसी विषय पर गहरे और गंभीर विचार करना। नारी विमर्श पश्चिमी देशों से आयी एक अवधारणा है। हिंदी साहित्य की कहानी, उपन्यास, नाटक, कविता इन विधाओं में 'स्त्री विमर्श' के पक्ष और विपक्ष में कई बार तेज आवाज़ें उठी हैं। पिछले एक दशक से स्त्री विमर्श 'नारी सशक्तिकरण' के रूप में प्रमुख चर्चा का विषय बन चुका है। हिंदी काव्य साहित्य ने इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हिंदी कवयित्रियों ने अपनी काव्य रचनाओं के माध्यम से स्त्रियों के सामाजिक शोषण और उनकी दुखद परिस्थिति को चित्रित किया हैं। जिससे समाज का ध्यान स्त्री जीवन की पीडा की ओर खींचा गया। 21 वीं सदी में महिलाओं को पुरुषों के समान कुछ बुनियादी अधिकार मिले हैं। इस सदी में शिक्षा के बढ़ते प्रसार से महिलाएं अपनी अहमियत को समझने लगीं। फिर भी, आज वर्तमान समय में स्त्रियां शोषित हो रही हैं, और इसलिए 'स्त्री विमर्श' की आवश्यकता अब भी बनी हुई है।

विषयवस्तु :

21 वीं सदी के काव्य में समाज की वर्तमान समस्याओं और जीवन के वास्तविक चित्रण की झलक मिलती है। इस समय में मनुष्य की मानसिक और शारीरिक समस्याओं, स्त्री के शोषण और पारिवारिक रिश्तों की उलझनों को बड़ी सटीकता से प्रस्तुत किया गया है। उदाहरण के तौर पर, पति-पत्नी के बीच तनाव, परिवार में टूटते रिश्ते और नारी पर पुरुष प्रधान समाज का दबाव यह सब आज

की समस्याएँ हैं। इनका काव्य में चित्रण हमें समाज की सच्चाई से परिचित कराता है। आधुनिक समाज में स्त्री जीवन संबंधी प्राचीन कुरीतियाँ जैसे बाल विवाह, सती प्रथा, दहेज जैसी परंपराएँ अब भी प्रचलित हैं और इन सबमे स्त्री जीवन ही पीसा जाता है। जबकि इन कुरीतियों के विरोध में कानून बनाए गए हैं, फिर भी यह सब खत्म नहीं हो पा रहा। इक्कीसवीं सदी की कविता में विषय, शिल्प और भाषा के स्तर पर अनेक परिवर्तन दिखाई देते हैं, परंतु नारी की सामाजिक स्थिति में कोई मूलभूत बदलाव नहीं आया है।

इस सदी की कविता ने स्त्री जीवन की जटिल सच्चाइयों को अधिक खुलकर प्रस्तुत किया है **अनामिका, कात्यायनी, निर्मला,पुतुल सविता सिंह, प्रियदर्शिनी, गीतांजलि श्री, नासिरा शर्मा, मृदुला गर्ग आदी.** इन कवयित्रियों की रचनाओं में स्त्री की अस्मिता, शोषण, संघर्ष, आत्मसम्मान, स्वतंत्रता और सामाजिक बराबरी जैसे विषयों को गहराई से उठाया गया है। इन कवयित्रियों ने हिंदी काव्य जगत में 'स्त्री विमर्श' को एक सशक्त दिशा प्रदान की हैं। इन्होंने अपने काव्य में नारी जीवन के पक्ष को गंभीरता से उभारा है। इन कवयित्रियों की रचनाओं में स्त्री केवल सहनशील पात्र नहीं, बल्कि सोचने-समझने वाली और संघर्ष करने वाली इकाई के रूप में सामने आती है।

21 वीं सदी के काव्य साहित्य में वर्तमान समाज और जीवन की परिस्थितियों का अत्यंत यथार्थ और संवेदनशील चित्रण देखने को मिलता है। इस सदी की कविता केवल कल्पना या सौंदर्य-बोध तक सीमित नहीं रह गई है, बल्कि वह समाज की कठोर सच्चाइयों से सीधे संवाद करती है। आज का मनुष्य अनेक प्रकार की विसंगतियों, तनावों और विरोधाभासों से घिरा हुआ है। तेज़ी से बदलती सामाजिक-आर्थिक संरचना, उपभोक्तावाद और भौतिक सफलता की होड़ ने मानवीय रिश्तों को जटिल बना दिया है। इसका प्रभाव सबसे अधिक स्त्री जीवन पर पड़ा है। इस सदी की हिंदी कविता में स्त्री की स्थिति को गहराई और ईमानदारी से प्रस्तुत किया गया है। स्त्री को आज भी शारीरिक और मानसिक शोषण का सामना करना पड़ता है। इस संबंध में हिंदी काव्य साहित्य कि प्रतिनिधी कवयित्री अनामिका कहती हैं – "स्त्री समाज एक ऐसा समाज है, जो वर्ग, नस्ल, राष्ट्र आदि संकुचित सीमाओं के पार जाता है और जहां कहीं दमन है - चाहे जिस वर्ग, जिस नस्ल, जिस आयु, जिस जाति की स्त्री त्रस्त है-उसको अँकवार लेता है। बूढ़े-बच्चे-अपंग-विस्थापित और अल्पसंख्यक भी मुख्यतः स्त्री ही हैं - यह मानता है।"[1] अनामिका वृहत्तर समाज की विडंबनाओं को एक स्त्री की नजर से देखना और परखना चाहती है। कवयित्री अनामिका समाज में नारी की उस पीड़ा और विवशता को स्वर देती हैं, जिसमें स्त्री का अपना कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं रह जाता। साहित्य के धरातल पर 'स्त्री-विमर्श' की बात अब शायद कुछ लोगों को पुरानी लगे लेकिन ये मुद्दा आज भी उतना ही ज्वलंत एवं महत्वपूर्ण है। आधुनिक कहे जानेवाले समाज में दिखावे की संस्कृति ने स्त्री जीवन को अलग तरह की विसंगतियों में डाल दिया है। परिवार का मान-सम्मान ढोने का जिम्मा उसी पर होता है। स्त्री जीवन की इस वास्तविकता को स्पष्ट करते हुए रेखा श्योराण कहती है –

"क्या लिखूं और क्या छोड़ूँ,
साँस उसकी पर दूसरों से पूछकर लेती है,
आँखें उसकी पर दूसरों से पूछकर सोती है।
दर्द का सैलाब उसकी आँखों में पार....
दूसरों से पूछकर रोती है...."[2]

सामाजिक मूल्यों चोला पहने आधुनिक समाज में स्थापित मूल्यों को मानते रहने में ही स्त्री की प्रतिष्ठा बनी रहती है। वह जरा-सी भी अपने कर्तव्यों या परम्परागत मूल्यों की सीमा से बाहर निकलकर आत्मकेन्द्रित होने का सोचे भी तो उसका वजूद तार-तार कर दिया जाता है। उसे ऐसे उपमानों के साथ रख दिया जाता है जो सदैव संवेदनहीन,

निर्जीव और टूटने एवं गिरने के लिए ही होते हैं। इस संबंध में अनामिका जी कहती है कि -

"अपनी जगह से गिरकर,
कहीं के नहीं रहते केश,
औरतें और नाखुन।"[3]

जन्म से लेकर जीवन के हर मोड़ तक उसे दूसरों के बनाए नियमों के अनुसार चलना पड़ता है। विवाह से पहले माता-पिता की इच्छाएँ और सामाजिक मर्यादाएँ उसके लिए सर्वोपरि होती हैं, तो विवाह के बाद वही स्थान पति और ससुराल के आदेश ले लेते हैं। इस पूरे क्रम में नारी की अपनी इच्छा, अपने सपने और अपने अधिकार कहीं पीछे छूट जाते हैं। यही कारण है कि कवयित्री स्त्री को 'बेजगह', अर्थात् बिना किसी अपने स्थान के अनुभव करती हैं। उनकी कविताओं में यह स्पष्ट रूप से उभरता है कि समाज ने नारी को केवल भूमिका निभाने वाली इकाई बना दिया है - बेटी, पत्नी, माँ परंतु एक स्वतंत्र मनुष्य के रूप में उसे स्वीकार नहीं किया। वह हर रिश्ते में स्वयं को ढालती रहती है, लेकिन बदले में उसे सम्मान और अधिकार नहीं मिलते। कवयित्री इस स्थिति को अन्यायपूर्ण मानती हैं और इससे मुक्ति की कामना करती हैं। उनका दर्द केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि समूची नारी जाति का सामूहिक दर्द है। 'बेजगह' कविता में कवयित्री यह प्रश्न उठाती हैं कि क्या नारी का कोई अपना घर, अपनी सोच और अपनी पहचान नहीं हो सकती? वे चाहती हैं कि स्त्री को केवल सहनशीलता और त्याग की मूर्ति न माना जाए, बल्कि उसे निर्णय लेने का अधिकार भी मिले। कविता स्त्री-मुक्ति की आकांक्षा को स्वर देती है और समाज की रूढ़ मानसिकता पर प्रहार करती है -

"जिनका कोई घर नहीं होता
उनकी होती है भला कौन-सी जगह?
जे छूट जाने पर
औरत हो जाती है
कटे हुए नाखूनों,
कंघी में फँसकर बाहर आए केशों-सी"[4]

अनामिका नारी की विवश स्थिति को उजागर करते हुए उसके आत्मसम्मान, स्वतंत्रता और अधिकारों की माँग करती है। कवयित्री स्पष्ट करती है कि जब तक नारी को समाज में अपना स्थान और अपनी आवाज़ नहीं मिलेगी, तब तक वह 'बेजगह' ही बनी रहेगी।

21 वीं सदी की कविता में चित्रित स्त्री को कार्यस्थल, परिवार और समाज—हर स्तर पर उसके अस्तित्व को चुनौती दी जाती है। उसकी इच्छाएँ अधूरी रह जाती हैं और निर्णय लेने का अधिकार अक्सर पुरुषप्रधान सोच के अधीन रहता है। इस सदी कविताओं में यह स्पष्ट रूप से दिखाई देता है कि स्त्री केवल सहनशील प्राणी नहीं, बल्कि भीतर ही भीतर संघर्ष करने वाली चेतन सत्ता है। पारिवारिक जीवन भी इन कविताओं का महत्वपूर्ण विषय है। पति-पत्नी के संबंधों में बढ़ता तनाव, आपसी संवाद की कमी, अविश्वास और अहंकार रिश्तों को कमजोर बना रहे हैं। प्रेम की जगह औपचारिकता और जिम्मेदारियों का बोझ आ गया है। स्त्री का सम्पूर्ण जीवन परिवार के प्रति समर्पित होता है। नारी गृहस्थी की बागडोर संभालकर परिवार, समाज एवं देश के नव-निर्माण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, इन सब में कहीं उसका स्वंय का अस्तित्व खो जाता है, इस संबंध में अनामिका कहती हैं –

"अपने ही वजूद की आँच के आगे
औचक हड़बड़ी में
खुद को ही सानती,
खुद को ही गूँधती हुई बार-बार
खुश है कि रोटी बेलती है जैसे पृथ्वी।"[5]

इस सदी की कविता में स्त्री की पीड़ा केवल व्यक्तिगत नहीं रह जाती, बल्कि वह सामाजिक संरचना से जुड़ जाती है। घरेलू हिंसा, मानसिक उत्पीड़न, लैंगिक भेदभाव और कार्यस्थल पर असमानता जैसे अनुभव

कविताओं में सहजता से उभरते हैं। कवि और कवयित्रियाँ यह दिखाते हैं कि स्त्री की चुप्पी उसकी कमजोरी नहीं, बल्कि परिस्थितियों द्वारा थोपी गई विवशता है। इसी चुप्पी के भीतर प्रतिरोध की चिंगारी सुलगती रहती है, जो समय आने पर स्वर बनकर फूट पड़ती है। विष्णु खरे जी की कविता 'हमारी पत्नियाँ' नारी के विभिन्न रूपों को प्रस्तुत करती है। नारी पर पुरूषों द्वारा होने वाले अत्याचार नारी के जीवन को नर्कमयी बना देते है। नारी हमेशा से ही अपने परिवार के लिए चिंतित रहती है वह पारिवारिक कार्यो में उलझी ही रहती है। विष्णु खरे जी लिखते है -

"और देखते है
अपनी पत्नियों के आटे की चक्की पर
या राशन की दुकान, बिजली के मिस्त्री या डबलरोटी
वाले के सामने, अपने कई रूपों में
और पहचानते हुए भी हम उसमें एक अजनबी औरत देखते
हैं।"[6]

उपरोक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि 21 वी सदी का काव्य साहित्य स्त्री जीवन की जटिल सच्चाइयों को अत्यंत संवेदनशील और यथार्थ रूप में अभिव्यक्त करने में अग्रसर रहा है। कविता केवल स्त्री की पीड़ा को दर्ज करने तक सीमित नहीं है, बल्कि उसके भीतर पल रहे प्रतिरोध, आत्मबोध और चेतना को भी मुखर स्वर देती है। लंबे समय तक साहित्य में स्त्री को सहनशील, त्यागमयी और मौन रूप में प्रस्तुत किया जाता रहा, किंतु 21 वीं सदी की कविता इस परंपरागत छवि को तोड़ती है। आज की कविता में स्त्री अपने अधिकारों, इच्छाओं और पहचान के प्रति सजग दिखाई देती है।

सारांश:

अंततः कहा जा सकता है कि 21 वीं सदी काव्य साहित्य स्त्री को एक जागरूक और सोचने वाली सत्ता के रूप में प्रस्तुत करता है। इस सदी की कविता प्रश्न करती है, असहमति दर्ज करती है और पुरुषप्रधान समाज की जड़ सोच को चुनौती भी देती है। आत्मबोध की यह प्रक्रिया स्त्री को अपने अस्तित्व के प्रति सजग बनाती है। वह केवल रिश्तों में बंधी भूमिका नहीं रह जाती, बल्कि स्वतंत्र व्यक्तित्व के रूप में सामने आती है। यह परिवर्तन आधुनिक कविता की सबसे बड़ी उपलब्धि है। यह कविता समाज को आईना दिखाने का कार्य भी करती है। कविताओं के माध्यम से पाठक को अपने आसपास के सामाजिक ढांचे, पारिवारिक संबंधों और मानसिकताओं पर पुनर्विचार करने का अवसर मिलता है। स्त्री के अनुभवों को पढ़ते हुए पाठक स्वयं से प्रश्न करता है कि क्या समाज सचमुच समानता और न्याय पर आधारित है। इस प्रकार कविता केवल भावनात्मक अनुभव नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना का माध्यम बन जाती है। इस सदी की कविता स्त्री जीवन की सच्चाइयों को उजागर कर समाज में आत्मचिंतन और परिवर्तन की चेतना को जागृत करती है। समग्रत: 21 वीं सदी का काव्यसाहित्य स्त्री को मौन से स्वर, पीड़ा से प्रतिरोध और अंधकार से आत्मबोध की ओर ले जाने वाली सशक्त अभिव्यक्ति है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1. स्त्री-विमर्श का लोकपक्ष - अनामिका, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ 23,24
2. वो औरत – रेखा श्योराण, पृष्ठ 22
3. खुरदरी हथेलियाँ – अमानिका, पृष्ठ 15
4. बेजगह – अनामिका, किताबघर प्रकाशन, पृष्ठ 11,12
5. कविता में औरत - अनामिका, वाणी प्रकाशन, पृष्ठ 50
6. कवि ने कहा – विष्णु खरे, किताबघर प्रकाशन, पृष्ठ 51